

21वीं सदी में पर्यावरण चेतना और आदिवासी विमर्श

रंजीश पाल

शोधार्थी डॉ भीमराव अंबेडकर यूनिवर्सिटी आगरा

डॉ पंकज कुमार

सहायक प्राध्यापक डॉ भीमराव अंबेडकर यूनिवर्सिटी आगरा

शोध सारांश

21वीं सदी में पर्यावरण चेतना वैश्विक स्तर पर एक प्रमुख मुद्दा बनकर उभरी है, जो जलवायु परिवर्तन, जैव विविधता हानि और प्राकृतिक संसाधनों के दोहन से जुड़ी है। आदिवासी विमर्श इस चेतना से गहराई से जुड़ा हुआ है, क्योंकि आदिवासी समुदाय सदियों से प्रकृति के साथ सामंजस्य में रहते आए हैं और उनके पारंपरिक ज्ञान (टीईके) पर्यावरण संरक्षण के लिए महत्वपूर्ण हैं। यह शोध पत्र इन दोनों विमर्शों के अंतर्संबंध का विश्लेषण करता है, जिसमें हिंदी साहित्य, वैश्विक उदाहरण और समकालीन चुनौतियों पर ध्यान केंद्रित है। उदाहरण के रूप में, हिंदी उपन्यासों जैसे “कुइयाँजान” और “मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ” में पर्यावरणीय संकट और आदिवासी संघर्ष को दर्शाया गया है, जबकि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर यूएनडीआरआईपी और आईपीबीईएस जैसे ढांचे आदिवासी ज्ञान को मान्यता देते हैं। उदाहरणस्वरूप, हिंदी साहित्य में पर्यावरण चेतना का उद्घरण: “प्रकृति और पर्यावरण के बगैर मानव-जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती।” निष्कर्ष में, आदिवासी दृष्टिकोण को मुख्यधारा में शामिल करने की आवश्यकता पर जोर दिया गया है, ताकि स्थायी विकास सुनिश्चित हो सके। यह पत्र पर्यावरण और आदिवासी अधिकारों के बीच संतुलन स्थापित करने के लिए नीति सिफारिशें भी प्रस्तुत करता है।

बीज शब्द

पर्यावरण चेतना, आदिवासी विमर्श, पारंपरिक ज्ञान, जलवायु परिवर्तन, जैव विविधता, हिंदी साहित्य, स्थायी विकास, एफपीआईसी, यूएनडीआरआईपी, पर्यावरण संरक्षण।

21वीं सदी में मानव सभ्यता के सामने सबसे बड़ी चुनौती पर्यावरणीय संकट है। औद्योगीकरण, शहरीकरण और पूंजीवादी विकास मॉडल ने पृथ्वी के संसाधनों का अंधाधुंध दोहन किया है, जिससे जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण और जैव विविधता की हानि जैसे मुद्दे उभरे हैं। पर्यावरण चेतना इसी संकट के प्रति जागरूकता और कार्रवाई का नाम है, जो वैश्विक स्तर पर सम्मेलनों जैसे पेरिस समझौते और राष्ट्रीय स्तर पर साहित्य व आंदोलनों में प्रतिबिंबित होती है। भारत में, जहां पर्यावरण संरक्षण की जड़ें वैदिक काल से जुड़ी हैं, 21वीं सदी में यह चेतना और मजबूत हुई है, विशेषकर आदिवासी समुदायों के माध्यम से।

आदिवासी विमर्श पर्यावरण चेतना से अविभाज्य है। विश्व की कुल जनसंख्या का 6% होने के बावजूद, आदिवासी लोग विश्व की शेष जैव विविधता का 80% प्रबंधित करते हैं। उनके पारंपरिक ज्ञान में प्रकृति को माता के रूप में देखने की भावना निहित है, जो संरक्षण और पोषण पर आधारित है। उदाहरण के लिए, वैदिक उद्घरण: “माता भूमि: पुत्रोऽहं पृथिव्या” कहकर पृथ्वी की अभ्यर्थना की गई है। 21वीं सदी में, विकास परियोजनाओं ने आदिवासी क्षेत्रों में जंगल कटाई, खनन और विस्थापन को बढ़ावा दिया है, जिससे उनकी संस्कृति और पर्यावरण दोनों खतरे में हैं। उदाहरणस्वरूप, झारखंड में यूरेनियम खनन ने नदियों

और मिट्टी को प्रदूषित किया है, जिससे आदिवासी स्वास्थ्य प्रभावित हुआ है। वैश्विक स्तर पर, आदिवासी लोग पर्यावरण रक्षक के रूप में उभरे हैं, जैसे अमेज़न में रेड+ कार्यक्रमों में उनकी भागीदारी।

यह विमर्श साहित्य में भी प्रमुख है। हिंदी उपन्यासों और कविताओं में पर्यावरणीय संकट को आदिवासी जीवन से जोड़ा गया है। जैसे, नासिरा शर्मा के “कुड़ियाँ जान” में जल संकट और फराका बांध के प्रभाव को दर्शाया गया है, जो आदिवासी और ग्रामीण समुदायों की पीड़ा को उजागर करता है। [10] इसी प्रकार, आदिवासी कविता में प्रकृति की चीख और जंगलों के विनाश को व्यक्त किया गया है, उदाहरण: “धरती हाँफ रही है” में उद्धरण: “मानवीय जीवन के आधार पाँच तत्वों (पानी, मिट्टी, जल, वायु)...”। इस पत्र का उद्देश्य इन विमर्शों के अंतर्संबंध को विश्लेषित करना है, ताकि स्थायी समाधान सुझाए जा सकें।

पर्यावरण चेतना का विकास

हिंदी साहित्य में पर्यावरण चेतना वेदों से शुरू हुई, लेकिन 21वीं सदी में यह संकट-केंद्रित हो गई। उपन्यासों में प्रदूषण, वनों की कटाई और जलवायु परिवर्तन दिखाए गए। कविताओं में प्रकृति को मानवीकृत कर संरक्षण की अपील की गई। उदाहरण: समकालीन कवि वनों, नदियों और मिट्टी की चिंता व्यक्त करते हैं। इक्कीसवीं सदी की हिंदी कविता में पर्यावरण चेतना विशेष प्रवृत्ति से युक्त है, जो कालबोध की मांग पूरी करती है। यह मानवतावादी दृष्टिकोण से जुड़ी है, जहां पर्यावरण जीवन का अभिन्न अंग है।

प्राचीन हिंदी साहित्य में कबीर, तुलसीदास जैसे कवियों ने प्रकृति के साथ परोपकार की भावना व्यक्त की। कबीर की साखियों में कम उपयोगी वृक्षों के स्थान पर फलदार वृक्षों के रोपण पर बल दिया गया। लेकिन 21वीं सदी में, पर्यावरण विमर्श भूमंडलीकरण और उदारीकरण के प्रभाव से प्रभावित है। विकास का तांडव विनाश का कारण बन रहा है, जैसा कि आलोक कुमार शुक्ल के अनुसार। उपन्यास जैसे “मरंगगोड़ा नीलकंठ हुआ” (महुआ माजी) में यूरेनियम खनन के दुष्प्रभाव दिखाए गए हैं, जहां विकिरण और प्रदूषण आदिवासी जीवन को नष्ट कर रहे हैं।

संजीव के “रह गई दिशाएँ इसी पार” में औद्योगिक सभ्यता के संकटों को चित्रित किया गया है, जहां उपभोक्तावादी मानसिकता प्रकृति को हानि पहुंचाती है। अलका सरावगी का “एक ब्रेक के बाद” और नासिरा शर्मा का “कुड़ियाँ जान” पर्यावरण संकट को सामाजिक सरोकारों से जोड़ते हैं। इन कृतियों में साहित्यकार पर्यावरण असंतुलन को कम करने के लिए वैचारिक आंदोलन शुरू करते हैं।

कविता में पर्यावरणीय चेतना ग्लोबलाइजेशन की समस्याओं पर केंद्रित है। हिंदी कवियों ने प्रकृति के महत्व को दर्शाते हुए जन जागृति लाने की चेष्टा की है। समकालीन दौर में प्रकृति विमर्श उपन्यास, कहानी और कविता में चिंता-चेतना से गुजर रहा है। पर्यावरण हमारे जीवन से जुड़ा विषय है, जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। हिंदी साहित्य में यह चेतना समाज को संवेदनशील बनाने का कार्य करती है।

आदिवासी विमर्श की भूमिका

आदिवासी साहित्य ने प्रकृति से जुड़े जीवन-मूल्यों को बचाने का प्रयास किया। उपन्यासों में आदिवासियों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति, शोषण और सांस्कृतिक तत्व दिखाए गए। जयपाल सिंह मुंडा जैसे नेताओं ने राजनीति से साहित्य तक चेतना फैलाई। कविताओं में पर्यावरण संरक्षण आदिवासी संस्कारों से जुड़ा है।

21वीं सदी में हिंदी साहित्य ने पर्यावरण संकट और आदिवासी जीवन को प्रमुख विषय बनाया है। भूमंडलीकरण, औद्योगिकीकरण और नगरीकरण ने पर्यावरण असंतुलन बढ़ाया, जिसे उपन्यास, कविता और कहानियों में चित्रित किया गया। आदिवासी विमर्श ने आदिवासियों की सांस्कृतिक अस्मिता, जल-जंगल-जमीन के संघर्ष को उजागर किया। [11] यह पेपर इन विमर्शों की जांच करता है, जहां पर्यावरण चेतना और आदिवासी दृष्टिकोण एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं।

पर्यावरण चेतना हिंदी साहित्य में प्राचीन काल से मौजूद रही है, लेकिन 21वीं सदी में यह वैश्विक संकट के रूप में उभरी है। वैदिक साहित्य में पृथ्वी को माता माना गया है, जहां “माता भूमि: पुत्रोऽहं पृथिव्या” जैसे उद्गार प्रकृति संरक्षण की अपील करते हैं। आधुनिक युग में, विशेषकर 2000 के बाद, साहित्यकारों ने प्रदूषण, वनों की कटाई, जल संकट और जलवायु परिवर्तन जैसे मुद्दों पर ध्यान केंद्रित किया है। उदाहरणस्वरूप, समकालीन उपन्यासों में विकास के नाम पर हो रहे विनाश को चित्रित किया गया है, जहां मनुष्य की लालसा प्रकृति को नष्ट कर रही है। हिंदी साहित्य में पर्यावरण के विभिन्न पहलुओं पर मंथन किया गया है, जैसे कि प्रकृति का सौंदर्य चित्रण, मानवीकरण, और प्रदूषण की समस्याएं। साहित्यकारों ने इन मुद्दों को तार्किक रूप से हल करने का प्रयास किया है।

आदिवासी विमर्श 1990 के दशक से उभरा, लेकिन 21वीं सदी में यह मुख्यधारा साहित्य का हिस्सा बन गया। आदिवासी लेखक और गैर-आदिवासी साहित्यकारों ने आदिवासियों के शोषण, विस्थापन और सांस्कृतिक संघर्ष को आवाज दी। जैसे कि झारखंड, छत्तीसगढ़ और मध्य प्रदेश के आदिवासी क्षेत्रों में हो रहे खनन और बांध निर्माण ने उनके जीवन को प्रभावित किया है। यह विमर्श साहित्य में आदिवासियों की सामाजिक दशा, अर्थव्यवस्था, भौगोलिक स्थिति और सांस्कृतिक तत्वों को उजागर करता है। 21वीं सदी के हिंदी उपन्यासों में आदिवासी जीवन के विविध आयामों का विवेचन किया गया है, जहां उनके संघर्षों को केंद्र में रखा गया है।

इस पेपर का उद्देश्य है कि पर्यावरण चेतना और आदिवासी विमर्श के बीच अंतर्संबंध को समझना, जहां आदिवासी प्रकृति के साथ सहजीवन जीते हैं। साहित्य में ये विमर्श समाज को जागरूक बनाने का कार्य करते हैं, और विकास के मॉडलों पर सवाल उठाते हैं। आगे हम इनके विकास, भूमिका और संबंधों पर विस्तार से चर्चा करेंगे।

पर्यावरण और आदिवासी का अंतर्संबंध

आदिवासी विमर्श पर्यावरण चेतना से जुड़ा है, क्योंकि आदिवासी प्रकृति के साथ सहजीवन जीते हैं। उपन्यासों में विकास के नाम पर विस्थापन दिखाया गया। झारखंड-केंद्रित कृतियां अस्मिता और पर्यावरण संघर्ष को जोड़ती हैं।

यह विमर्श मुख्यधारा साहित्य में आदिवासी दर्शन को स्थान देता है। आदिवासियों का प्रकृति से गहरा संबंध है, लेकिन विकास ने उसे खतरे में डाला है। मरंगगोड़ा नीलकंठ हुआ में यूरेनियम उत्खनन से जल, जंगल दूषित हो रहे हैं। बहुराष्ट्रीय कंपनियां मशीनों से वातावरण प्रदूषित कर रही हैं। आदिवासी कविता में पर्यावरण चेतना स्थानीय पर्यावरण के साथ जुड़ी है।

21वीं सदी में भूमंडलीकरण ने मानव विकास के नाम पर प्रकृति को दांव पर लगाया। आदिवासी साहित्य में प्रकृति और पर्यावरण के सरोकार प्रमुख हैं। साहित्यकार पर्यावरण संकट को आदिवासी जीवन से जोड़कर समाज को जागरूक बनाते हैं। यह अंतर्संबंध संरक्षण और न्याय की आवश्यकता पर जोर देता है।

आदिवासी विमर्श पर्यावरणीय नारेटिव्स को मजबूत करता है, जहां सांस्कृतिक सत्य वैज्ञानिक सत्यों से जुड़ते हैं। हिंदी साहित्य में यह संबंध समाज क्षमता बढ़ाता है।

आदिवासी विमर्श और पर्यावरण

आदिवासी विमर्श 21वीं सदी में अस्मिता, अधिकारों और संस्कृति पर केंद्रित है, जहां पर्यावरण केंद्रीय है। यूएनडीआरआईपी ने आत्मनिर्णय और एफपीआईसी को मान्यता दी है, जो आदिवासी भूमि अधिकारों की रक्षा करता है। [66] भारत में, आदिवासी

क्षेत्रों में खनन ने विस्थापन बढ़ाया, लेकिन वे संघर्ष कर रहे हैं। जैसे, महुआ मांझी के उपन्यास में यूरेनियम खनन के प्रभाव दिखाए गए हैं।

वैश्विक उदाहरण:

अमेज़न में आदिवासी महिलाएं जलवायु समापन में नेतृत्व कर रही हैं। आदिवासी भाषाओं का क्षय पर्यावरणीय ज्ञान को प्रभावित कर रहा है, इसलिए 2022-2032 को आदिवासी भाषा दशक घोषित किया गया। [०६] विमर्श में, आदिवासी लोग पर्यावरणीय न्याय के लिए कूटनीति का उपयोग कर रहे हैं, उदाहरण: “आदिवासी विमर्श में इस समय आदिवासी और गैर आदिवासी दोनों तरह के साहित्यकार...”

साहित्य और संस्कृति में प्रतिबिंब

हिंदी साहित्य में पर्यावरण चेतना आदिवासी विमर्श से जुड़ी है। “मीठी नीम” में वृक्ष संरक्षण की जागरूकता दिखाई गई है, जहां आदिवासी महिला प्रकृति की रक्षा करती है।

आदिवासी कविता में, जंगलों की चीख और विकास की आलोचना है, उदाहरण: “समकालीन कवियों ने पर्यावरण से जुड़ी समस्याओं का कई प्रकार से चिंतन प्रस्तुत किया है।”

वैश्विक साहित्य में, आदिवासी कहानियां पर्यावरणीय संबंध को दर्शाती हैं, जैसे ओनोडेगा की माता पृथ्वी की अवधारणा। [०७] संस्कृति में, त्योहार और रिवाज पर्यावरण संरक्षण से जुड़े हैं, उदाहरण: “आदिवासी समाज की सांस्कृतिक, सामाजिक और राजनीतिक संघर्षों...”

समकालीन चुनौतियाँ और समाधान

समकालीन चुनौतियाँ: जलवायु परिवर्तन से आदिवासी स्वास्थ्य प्रभावित, भाषा हानि से ज्ञान लुप्त। [०८] समाधान: आदिवासी ज्ञान को नीतियों में शामिल करना, जैसे नगोया प्रोटोकॉल। [०९] भारत में, आदिवासी महिलाओं की भूमिका बढ़ाएं, उदाहरण: “आदिवासी विमर्श बीसवीं सदी के अंतिम दशकों में शुरू हुआ...”

21वीं सदी में पर्यावरण चेतना और आदिवासी विमर्श का एकीकरण आवश्यक है। आदिवासी ज्ञान से वैश्विक संकटों का समाधान संभव है, लेकिन अधिकारों की रक्षा करनी होगी। साहित्य और नीतियां इसमें सहायक हैं, ताकि स्थायी भविष्य बने।

संदर्भ सूची

1. इक्कीसवीं सदी की हिन्दी कविता में पर्यावरण चेतना.
2. इक्कीसवीं सदी की हिन्दी कविताओं में पर्यावरणीय चेतना।
3. भारतीय दर्शन एवं वैदिक साहित्य में पर्यावरण - चेतना।
4. हिंदी सिनेमा में पर्यावरण चेतना : दशा एवं दिशा।
5. समकालीन हिंदी कविता में पर्यावरणीय चेतना।
6. 21वीं सदी के उपन्यासों में पर्यावरण संकट।
7. शोध पत्र और राष्ट्रीय संगोष्ठी।
8. ‘धरती हाँफ रही है’ में पर्यावरणीय चेतना।
9. हिंदी साहित्य में पर्यावरणीय चेतना के विविध आयाम।
10. पर्यावरण और हिंदी उपन्यास।

11. समकालीन हिन्दी साहित्य और विमर्श – आदिवासी विमर्श।
12. हिन्दी साहित्य में आदिवासी विमर्श।
13. वैचारिकी: आदिवासी साहित्य विमर्श।
14. आदिवासी विमर्श : अवधारणा और आंदोलन

नाम. -रंजीश पाल
विश्वविद्यालय का नाम. -डॉ भीमराव अंबेडकर यूनिवर्सिटी आगरा
पता -चचेरी मोड चुनार मिर्जापुर
Pin code. -231304
Mobile No. -8299632091
E-mail. -ranjeeshpal@gmail.com